प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय,बिलासपुर

माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रीतिंकर दिवाकर

रिट याचिका (सेवा) क्रमांक-1407/2005

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

याचिकाकर्ता- दिलीप कुमार दुबे

बनाम

उत्तरदातागण- मध्यप्रदेश राज्य व अन्य

आदेश हेतु दिनांक 25.10.2010 को सूचीबद्ध करें ।

सही/-

(प्रीतिंकर दिवाकर)

न्यायाधीश

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय,बिलासपुर

(माननीय न्यायमूर्ति श्री प्रीतिंकर दिवाकर)

रिट याचिका (सेवा) क्रमांक-1407/2005

याचिकाकर्ता- दिलीप कुमार दुबे

बनाम

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उत्तरदातागण- **मध्यप्रदेश राज्य व अन्य**

उपस्थिति

याचिककर्ता की ओर से- श्री पी.एस कोशी, अधिवक्ता,

उत्तरदातागण/राज्य की ओर से- श्री वी.वी.एस मूर्ति, उप-महाधिवक्ता

(भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत रिट याचिका)

<u>आदेश</u>

<u>(25.10.2010)</u>

1. याचिकाकर्ता, जो पुलिस विभाग का कर्मचारी था और आरक्षक के पद पर कार्यरत था, ने पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर द्वारा पारित आदेश दिनांक 30.06.1993 (अनुलग्नक ए-11) जिसके तहत उसे उसके पद से अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्ति कर दिया गया था, को चुनौती दिया है। याचिकाकर्ता ने पुलिस उप-महानिरीक्षक, बिलासपुर, द्वारा पारित आदेश दिनांक 12.10.1993 (अनुलग्नक ए-13) और पुलिस महानिरीक्षक, बिलासपुर द्वारा पारित आदेश दिनांक 3.2.1994 (अनुलग्नक ए-14) जिसके तहत पुलिस अधीक्षक द्वारा पारित आदेश दिनांक 30.06.1993 की पुष्टि की गई थी,को भी चुनौती दिया है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

2. संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि दिनांक 5.7.1982 को याचिकाकर्ता को पुलिस विभाग में आरक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। दिनांक 18.12.1992 को थाना कोटा में पदस्थ रहने के दौरान उसे निलंबित कर दिया गया और दिनांक 19.12.1992 को पुलिस अधीक्षक ने श्री एल.एस. सिंह, नगर निरीक्षक, कोटा को इस सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट (प्रतिवेदन) प्रस्तुत करने का निर्देश दिया और तदनुसार दिनांक 1.1.1993 को उनके द्वारा रिपोर्ट (प्रतिवेदन) प्रस्तुत किया गया। दिनांक 24.2.1993 को पुलिस अधीक्षक द्वारा याचिकाकर्ता को आरोप पत्र (अनुलग्नक ए-1) जारी किया गया जिसमें उसके विरुद्ध तीन आरोप लगाए गये और याचिकाकर्ता को उक्त तिथि से 10 दिनों के भीतर अपना जवाब प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया। याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाया गया

पहला आरोप यह था कि दिनांक 18.12.1992 को उसने नगर निरीक्षक एल.एस. सिंह के साथ गाली गलौज किया और उन पर लोहे की रॉड से हमला करने का प्रयास किया। उनके विरुद्ध लगाया गया दूसरा आरोप यह था कि थाने में प्रहरी (गार्ड) के रूप में कार्य करने के दौरान उन्हें शराब के नशे में पाया गया। उनके विरुद्ध लगाया गया तीसरा आरोप यह था कि पूर्व में उन्हें उनके व्यवहार (टशन) के लिए दंडित किया गया था, लेकिन उनके आचरण में कोई सुधार नहीं देखा गया। दिनांक 24.2.1993 से जवाब देने हेतु निर्धारित 10 दिन की अवधि के अवसान से पूर्व पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर ने दिनांक 26.2.1993 को अनुविभागीय अधिकारी (पुलिस), कोटा को जांच अधिकारी नियुक्त किया और अनुलग्नक ए-5 के माध्यम से ही पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर ने याचिकाकर्ता को जांच अधिकारी के समक्ष अपना जवाब प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। यद्यपि दिनांक 6.3.1993 को याचिकाकर्ता ने अनुलग्नक ए-4 माध्यम से अपना जवाब पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर को प्रस्तुत किया, जिसे उन्होंने अनुलग्नक ए-6 के माध्यम से जाँच अधिकारी को विधिवत प्रेषित किया तथा दिनांक 7.5.1993 को याचिकाकर्ता ने आरोप पत्र का जबाब (अनुलग्नक ए-7) जाँच अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

3. जाँच अधिकारी द्वारा किये गये जाँच के दौरान, दिनांक 17.4.1993 से दिनांक 7.5.1993 के बीच, जाँच अधिकारी ने सात गवाहों, अर्थात् ललन पांडे- मुख्य आरक्षक सामंत कोसले- मुख्य आरक्षक, भैरो प्रसाद-आरक्षक, एम.पी. मिश्रा- ए.एस.आई., एल.एस.सिंह- शिकायतकर्ता, राजेश कुमार साहू और कुमारी रंजना शुक्ला का परीक्षण कर जाँच कार्यवाही पूरा किया। यह स्वीकृत है कि जाँच के दौरान न तो कोई प्रस्तुतकर्ता अधिकारी नियुक्त किया गया था और न ही याचिकाकर्ता को उसके मामले के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए

कहा गया था। संपूर्ण जाँच, जाँच अधिकारी द्वारा ही किया गया, जिन्होंने बाद में प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के रूप में भी कार्य किया। दिनांक 7.05.1993 को याचिकाकर्ता ने अपना प्रतिवाद कथन (बचाव) (अनुलग्नक ए -7) प्रस्तुत किया तथा उसके बाद दिनांक 8.05.1993 को जाँच अधिकारी ने अपना प्रतिवेदन (रिपोर्ट) प्रस्तुत किया। दिनांक 14.5.1993 को पुलिस अधीक्षक ने याचिकाकर्ता को दूसरा कारण बताओ नोटिस अनुलग्नक ए-8 जारी किया, जिसका याचिकाकर्ता ने दिनांक 29.6.1993 को विधिवत जबाब (अनुलग्नक ए-10) प्रस्तुत किया। अगले ही दिन अर्थात दिनांक 30.6.1993 को पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर द्वारा याचिकाकर्ता को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने का आक्षेपित आदेश पारित किया गया। पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर के इस आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता ने दिनांक 11.8.1993 को अनुलग्नक ए-12 के तहत पुलिस उप महानिरीक्षक, बिलासपुर के समक्ष अपील प्रस्तुत किया, जिसे दिनांक 12.10.1993 को (अनुलग्नक ए-13) के माध्यम से खारिज कर दिया गया। पुलिस उप महानिरीक्षक बिलासपुर के इस आदेश के विरुद्ध याचिकाकर्ता ने पुलिस महानिरीक्षक, बिलासपुर के समक्ष अपील प्रस्तुत किया, लेकिन उसे भी आदेश दिनांक 3.2.1994 (अनुलग्नक ए-14) के माध्यम से खारिज कर दिया गया।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध पूरी कार्यवाही पक्षपातपूर्ण ढंग से किया गया है क्योंकि याचिकाकर्ता के तत्कालीन नगर निरीक्षक एल.एस. सिंह के साथ अच्छे संबंध नहीं थे। उनके अनुसार, पूर्व में भी वह और उक्त एल.एस. सिंह एक साथ पदस्थ थे और उनके संबंध मित्रतापूर्ण नहीं थे। इस तथ्य को उक्त एल.एस. सिंह ने भी जाँच के दौरान स्वीकार किया है। यह तर्क दिया गया है कि विभागीय जाँच पूर्वाग्रह से

ग्रस्त होकर पक्षपातपूर्ण ढंग से किया गया है और इसीलिए इसे जल्दबाजी में मात्र 20 दिनों के भीतर पूरा कर लिया गया और उसके बाद याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने का आक्षेपित आदेश पारित किया गया है। उनका तर्क है कि विभाग द्वारा प्रस्तुतकर्ता अधिकारी की नियुक्ति भी नहीं की गई और जाँच अधिकारी ने स्वयं अभियोजक के साथ-साथ न्यायाधीश की भूमिका भी निभाई है। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि दिनांक 24.2.1993 को याचिकाकर्ता को पुलिस अधीक्षक द्वारा अनुलग्नक ए-1 के माध्यम से आरोप पत्र के सम्बन्ध में उसका जवाब प्रस्तुत करने के लिए 10 दिन का समय दिया गया था, लेकिन जवाब का इंतजार किए बिना, पुलिस अधीक्षक द्वारा दिनांक 26.2.1993 को ही जांच अधिकारी नियुक्त कर दिया गया और याचिकाकर्ता को कहा गया कि वह जांच अधिकारी के समक्ष अपना जवाब प्रस्तुत करें। याचिकाकर्ता के अनुसार, उत्तरदातागण का यह कृत्य स्वयं दर्शाता है कि जाँच किस तरीके से किया गया है। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि पुलिस अधीक्षक ने याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत जबाब को जाँच अधिकारी को भेज दिया, जबकि उन्हें स्वयं याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत जबाब पर विचार करना था और अपनी संतुष्टि के अनुसार किसी विशिष्ट निष्कर्ष पर पहुँचने के बाद ही आगे की कार्यवाही करनी चाहिए थी। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि ऐसा करते समय पुलिस अधीक्षक ने छत्तीसगढ़ सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 के नियम 14 के आज्ञापक प्रावधानों का पूर्णतः उल्लंघन किया है। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि जाँच अधिकारी की नियुक्ति में यह दर्शाया जाना चाहिए था कि पुलिस अधीक्षक द्वारा याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत जबाब पर विचार किया गया और उसके बाद जाँच अधिकारी की नियुक्ति किया गया। उन्होंने आगे तर्क प्रस्तुत किया कि जाँच के दौरान विभाग द्वारा केवल उन व्यक्तियों का परीक्षण किया गया जो नगर निरीक्षक एल.एस सिंह से प्रभावित थे और उनके नियंत्रण में थे। उनके अनुसार,

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

यद्यपि स्वतंत्र गवाह उमा शंकर सिंह दिनांक 3.5.1998 को अभियोजन साक्षी के रूप में जाँच अधिकारी के समक्ष उपस्थित थे, लेकिन उनका परीक्षण इस आधार पर नहीं किया गया क्योंकि जांच अधिकारी को उनके कथित पूर्व आचरण के कारण उनकी विश्वसनीयता पर संदेह था। जाँच अधिकारी द्वारा स्वतंत्र गवाह का परीक्षण न करने का एक और कारण यह बताया गया कि वह शराब की तस्करी में शामिल थे। जाँच अधिकारी द्वारा स्वतंत्र गवाह से पूछताछ न करने का एक अन्य कारण यह भी बताया गया कि वह अवैध रूप से आर्थिक लाभ प्राप्त करने में लिप्त थे। उन्होंने आगे तर्क प्रस्तुत किया कि जाँच अधिकारी को इस साक्षी का परीक्षण करने से इनकार नहीं करना चाहिए था और उन्हे निष्पक्ष रूप से इस साक्षी का परीक्षण करने के बाद उनके साक्ष्यों का मूल्यांकन करना चाहिए था। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि जाँच के दौरान, जाँच अधिकारी ने स्वयं साक्षियों का प्रति-परीक्षण किया और उनसे सूचक प्रश्न पूछा, जो विधि के अंतर्गत अनुमेय नहीं है। उन्होंने थाना कोटा के सहायक उप-निरीक्षक एम.पी. मिश्रा के बयान का हवाला दिया। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि यद्यपि याचिकाकर्ता के विरुद्ध यह आरोप है कि वह शराब के नशे में पाया गया था, लेकिन इस आशय का कोई चिकित्सीय प्रमाण नहीं है, यद्यपि विभाग के पास याचिकाकर्ता की चिकित्सीय जाँच करने का पर्याप्त अवसर था। उन्होंने आगे तर्क दिया कि अभिलेख में ऐसा कोई दस्तावेजी साक्ष्य नहीं है जिससे यह प्रकट होता है कि याचिकाकर्ता पूर्व में भी लगभग इसी तरह की घटना में शामिल था और केवल शिकायतकर्ता के कथन के आधार पर ही याचिकाकर्ता के विरुद्ध यह आरोप सिद्ध पाया गया है। उन्होंने तर्क दिया कि प्रारंभ में नगर निरीक्षक एल.एस. सिंह ने ही याचिकाकर्ता के कृत्य के सम्बन्ध में पुलिस अधीक्षक से शिकायत की थी और बदले में, पुलिस अधीक्षक ने स्वयं एल.एस. सिंह को प्रारंभिक जाँच करने और प्रतिवेदन (रिपोर्ट) प्रस्तुत करने का निर्देश

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

दिया और बाद में एल.एस. सिंह द्वारा प्रस्तुत उक्त प्रतिवेदन (रिपोर्ट) दिनांक 1.1.1993 के आधार पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप पत्र जारी किया गया। याचिकाकर्ता के अनुसार, यह पूरी प्रक्रिया दिखावा मात्र है और याचिकाकर्ता को किसी न किसी तरह से दंडित करने के आशय से किया गया है। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया कि इस मामले में जांच अधिकारी ने प्रस्तुतकर्ता अधिकारी की भूमिका भी निभाई है जिससे पक्षपातपूर्ण कार्यवाही का सरलता से अनुमान लगाया जा सकता है। अंत में यह भी तर्क दिया गया है कि तीनों आक्षेपित आदेश अर्थात आदेश दिनांक 30.6.1993 (अनुलग्नक ए-11), आदेश दिनांक 12.10.1993 (अनुलग्नक ए-13) और आदेश दिनांक 3.2.1994 (अनुलग्नक ए-14) जो क्रमशः पुलिस अधीक्षक, उप-महानिरीक्षक, और महानिरीक्षक द्वारा पारित किया गया था, वह विवेक का प्रयोग किये बिना, केवल जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत जांच प्रतिवेदन (रिपोर्ट) के आधार पर यांत्रिक तरीके से पारित किये गये थे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

5. उत्तरदातागण के अधिवक्ता द्वारा तर्क प्रस्तुत किया गया है कि संपूर्ण जाँच पूर्ण रूप से विधि के अनुसार किया गया है और इसमें कोई अवैधता नहीं है। उन्होंने तर्क दिया है कि याचिकाकर्ता को पूरा अवसर दिया गया था और प्राकृतिक न्याय के प्रावधानों का पूर्ण रूप से पालन किया गया था। यद्यपि, उन्होंने इस बात पर विवाद नहीं किया कि जाँच के समय कोई प्रस्तुतकर्ता अधिकारी नियुक्त नहीं किया गया था और जाँच अधिकारी ने स्वयं अभियोजक और न्यायाधीश दोनों की भूमिका निभाई है। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि याचिकाकर्ता की चिकित्सकीय जाँच नहीं की गई थी और अभिलेख पर ऐसा कोई भी साक्ष्य नहीं है जिससे पता चले कि पूर्व में भी उसे उसके कर्तव्य निर्वहन के दौरान शराब पीने के इसी कृत्य के लिए दंडित किया गया था।

उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि स्वतंत्र साक्षी उमा शंकर सिंह दिनांक 3.5.1993 को जाँच अधिकारी के समक्ष उपस्थित हुए थे, लेकिन उनके द्वारा उनका परीक्षण नहीं किया गया था ।

6. पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत परस्पर विरोधी तर्कों पर विचार करने से पूर्व, मध्य प्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 के नियम 14.4 का संदर्भ लेना लाभदायक होगा, जो इस प्रकार है:-

> 14 (4) अनुशासिक प्राधिकारी शासकीय सेवक को आरोप पदों की, अवचार या कदाचार के लांछनों के विवरण की और उन दस्तावेजों तथा साक्षियों की, जिनके कि द्वारा प्रत्येक आरोप पद का प्रमाणित किया जाना प्रस्तावित है, सूची की एक प्रतिलिपि परिदत्त करेगा या परिदत्त करवाएगा और शासकीय सेवक से यह अपेक्षा करेगा कि वह ऐसे समय के भीतर, जो कि उल्लिखित किया जाय, अपने प्रतिवाद का लिखित कथन प्रस्तुत करे और यह भी बतलाये कि क्या वह अपनी व्यक्तिशः सुनवाई की जाने की वांन्छा करता है।
>
> मध्य प्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 के नियम 14 (5) जो जांच एवं प्रस्तुतकर्ता अधिकारियों की नियुक्ति से सम्बन्धित है, जो इस याचिका को निराकृत करने हेतु सुसंगत है, उसे भी नीचे उद्धृत किया गया है:-
>
> " 14(5) (क) प्रतिवाद का लिखित कथन प्राप्त होने पर, अनुशासिक प्राधिकारी स्वयं, आरोप-पदों में से ऐसे आरोप पदों की जो स्वीकार नहीं किये गये हों, जांच कर सकेगा या उपनियम (2) के अधीन उस प्रयोजन के लिये, जांचकर्ता प्राधिकारी की नियुक्ति कर सकेगा, यदि वह ऐसा करना आवश्यक समझे और जहां समस्त आरोप

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

शासकीय सेवक द्वारा प्रतिपाद के अपने लिखित कथन में स्वीकार कर लिये गये हों, वहां अनुशासिक प्राधिकारी ऐसा साक्ष्य लेने के पश्चात् जैसा कि वह उचित समझे, प्रत्येक आरोप के सम्बन्ध में अपना निष्कर्ष अभिलिखित करेगा और नियम 15 में दी गयी रीति में कार्य करेगा।

(ख) यदि शासकीय सेवक द्वारा, प्रतिवाद का कोई भी लिखित कथन प्रस्तुत न किया जाय, तो अनुशासिक प्राधिकारी स्वयं आरोप पदों की जांच करेगा, या उपनियम (2) के अधीन उस प्रयोजन के लिये जांचकर्तार्ता प्राधिकारी की नियुक्ति कर सकेगा यदि वह ऐसा करना आवश्यक समझे।

(ग) जहां अनुशासिक प्राधिकारी स्वयं किसी भी आरोप पद की जांच करे, या ऐसे आरोप की जांच करने के लिये किसी जांचकर्ता प्राधिकारी की नियुक्ति करे, तो वह आदेश द्वारा आरोप पदों के समर्थन में अपनी ओर से मामला, प्रस्तुत करने के लिये किसी शासकीय सेवक या विधि व्यवसायी को नियक्त कर सकेगा जो कि जो कि "प्रस्तुतकर्ता पदाधिकारी" के नाम से जाना जाएगा।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

7. यह स्वीकृत है कि दिनांक 24.2.1993 को अनुलग्नक ए-1 के माध्यम से पुलिस अधीक्षक द्वारा याचिकाकर्ता को आरोप पत्र जारी किया गया था जिसमें उसके विरुद्ध तीन आरोप लगाए गए थे और उसे 10 दिनों के भीतर अपना जवाब प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था। यह भी स्वीकृत है कि दिनांक 24.2.1993 के पत्र के सम्बन्ध में याचिकाकर्ता के जवाब की प्रतीक्षा किए बिना, पुलिस अधीक्षक, बिलासपुर द्वारा दिनांक 26.2.1993 के पत्र (अनुलग्नक ए-5) के माध्यम से अनुविभागीय अधिकारी (पुलिस) कोटा, को जाँच अधिकारी

नियुक्त किया गया और याचिकाकर्ता को निर्देश दिया गया कि वह दिनांक 24.2.1993 के पत्र के सम्बन्ध में अपना जबाब सीधे जाँच अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करे। इसके अलावा, यह भी विवादित नहीं है कि याचिकाकर्ता ने दिनांक 6.3.1993 को अपना जबाब (अनुलग्नक ए-4) पुलिस अधीक्षक को प्रस्तुत किया, जिन्होंने गुण-दोष के आधार पर उस पर विचार करने के बजाय उसे अनुलग्नक ए-6 के माध्यम से जाँच अधिकारी को भेज दिया। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि दिनांक 24.2.1993 के आरोप पत्र के सम्बन्ध में याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत जवाब पर कभी विचार नहीं किया गया, जबकि उनके द्वारा उस पर विचार किया जाना आवश्यक था। मध्य प्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 के नियम 14 (4) और 15 (क, ख, ग) के पठन मात्र से ही दर्शित होता है कि आज्ञापक प्रकृति का होने के बावजूद, इस मामले में उनके द्वारा नियमों का पूर्ण रूप से अनदेखी किया गया है और नियमों के विपरीत, जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया और याचिकाकर्ता को जाँच अधिकारी के समक्ष अपना जवाब प्रस्तुत करने के लिए कहा गया, परन्तु वास्तव में याचिकाकर्ता का जवाब जो उसने अनुशासिक प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया था, को उनके द्वारा जाँच अधिकारी को प्रेषित कर दिया गया। अनुशासिक प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के सम्बन्ध में कभी भी अपने विवेक का प्रयोग नहीं किया और यंत्रवत् तरीके से जाँच अधिकारी को याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत जवाब और कार्यवाही की जाँच करने का निर्देश दिया। **पंजाब राज्य बनाम वी.के. खन्ना 2001 (2) एस सी सी 330** में प्रकशित मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है-

> "34. उच्च न्यायालय ने इस प्रश्न पर गहन विचार करते हुए अधिकारियों की मानसिकता को प्रमाणित करने के लिए एक जाँच

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

अधिकारी की नियुक्ति के संबंध में मुख्यमंत्री की घोषणा के तथ्य पर विचार किया और इस प्रकार पक्षपात को दर्शाया - पक्षपात का क्या अर्थ है, इस पर हम इस निर्णय में पहले ही चर्चा कर चुके हैं, इसलिए इसमें और विस्तार से चर्चा की आवश्यकता नहीं है, लेकिन घोषणा के तथ्य को मानसिकता के एक उदाहरण के रूप में लिया गया है एक अर्थात; जाँच जबाब की परवाह किए बिना आगे बढ़ेगी- क्या यह संबंधित अधिकारी के प्रति एक स्वतंत्र और निष्पक्ष रवैये का संकेत है? जबाब संभवतः हाँ में नहीं हो सकता। सेवा न्यायशास्त्र में यह सर्वविदित है कि संबंधित प्राधिकारी को आरोप-पत्र या कारण बताओ नोटिस का उत्तर प्राप्त होने पर, जैसा भी मामला हो, इस बारे में विचार करना होगा कि क्या आगे जाँच की आवश्यकता है। इस घटना में, विचार-विमर्श के बाद यह हाँ में है– जाँच आगे बढ़ी है, अन्यथा नहीं और यह सेवा न्यायशास्त्र का वह भाग है जिस पर श्री सुब्रमण्यम ने भरोसा किया था और इसी आधार पर, उत्तरदातागण (अपीलार्थीगण) के आचरण की कड़ी आलोचना की थी और उन पर पक्षपात करने का आरोप लगाया था। अभिलेख में उपलब्ध सामग्री पर विचार करने पर हमें ऐसी आलोचना में कुछ औचित्य मिलता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इसके अलावा, **सतवतीदेस्वाल बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य 2010 (1) एससीसी 126** में प्रकशित मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है-

"8. इसके अलावा, परिषद कार्यकारिणी समितियों के गठन के सांविधिक प्रावधान पर सरसरी निगाह डालने से यह स्पष्ट हो जाएगा कि किसी कर्मचारी पर कोई भी दीर्घ शास्ति, अर्थात् 'सेवा

समाप्ति' का आदेश, अधिरोपित करने से पहले, वैधानिक नियमों में निर्दिष्ट तरीके से जाँच की जानी चाहिए, जिसके द्वारा अनुशासिक प्राधिकारी उन आरोपों के आधार पर जिन पर जाँच प्रस्तावित है, निश्चित आरोप विरचित करेगा, कर्मचारी को लिखित कथन प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना चाहिए जिसमें यह बताया गया हो कि क्या वह व्यक्तिगत रूप से सुनवाई की इच्छा रखता/रखती है और प्रबंध समिति के अनुमोदन के बिना कोई भी सेवा समाप्ति आदेश पारित नहीं किया जा सकता। अतः, हमारे विचार से, उच्च न्यायालय ने केवल इसी आधार पर, याचिकाकर्ता की रिट याचिका को खारिज करने में गंभीर त्रुटि कारित किया था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. तदनुसार, उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है और अपीलार्थी के विरुद्ध पारित सेवा समाप्ति का आदेश अभिखंडित (रद्द) किया जाता है और रिट याचिका स्वीकार किया जाता है। यद्यपि, यदि प्राधिकारी चाहें तो, अपीलार्थी के विरुद्ध सेवा समाप्ति के लिए अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ कर सकते हैं और यदि ऐसी अनुशासनात्मक कार्यवाही प्रारंभ की जाती है, तो प्राधिकारी उचित सुनवाई का अवसर देंगे और पक्षकारों को अपने-अपने पक्ष के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति देंगे और ऐसा अवसर देने के बाद, अनुशासिक प्राधिकारी अपीलार्थी की सुनवाई करेंगे और फिर अपीलार्थी पर लागू संबंधित वैधानिक नियमों के अनुपालन में अपीलार्थी की सेवा समाप्ति के प्रश्न पर अंतिम आदेश पारित करेंगे।

8. मध्य प्रदेश सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1966 के आज्ञापक प्रावधानों का पालन न किया जाना संपूर्ण विभागीय जाँच संदेहास्पद बनाता है। इसके अलावा, अभिलेखों से यह स्पष्ट है कि वर्तमान मामले में शिकायतकर्ता तत्कालीन नगर निरीक्षक एल.एस. सिंह हैं, जिनके साथ याचिकाकर्ता ने दुर्व्यवहार किया था और उनकी शिकायत पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था। जब उक्त एल.एस. सिंह स्वयं पुलिस अधीक्षक के समक्ष शिकायतकर्ता थे, ऐसी स्थिति में पुलिस अधीक्षक को एल.एस. सिंह को जाँच करने और प्रतिवेदन (रिपोर्ट) प्रस्तुत करने का निर्देश नहीं देना चाहिए था। निष्पक्षता के लिए, याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों की जाँच के लिए किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त किया जाना चाहिए था और उनके द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन (रिपोर्ट) की जाँच के बाद अनुशासिक प्राधिकारी को आगे की कार्यवाही करनी चाहिए थी। इसके अलावा, नगर निरीक्षक ने अपने कथन में इस तथ्य को स्वीकार किया है कि पूर्व में वह और याचिकाकर्ता एक साथ पदस्थ थे और उनके बीच पहले से ही शत्रुता थी। अभिलेख से भी यह दर्शित होता हैं कि जांच अत्यंत जल्दबाजी में केवल 20 दिनों की अवधि में पूर्ण किया गया और इस अवधि के दौरान उत्तरदातागण द्वारा शिकायतकर्ता सहित कुल सात साक्षियों का परीक्षण किया गया। जांच अधिकारी के आदेश पत्रको से यह तथ्य स्पष्ट है कि जांच अधिकारी को जांच समाप्त करने की जल्दबाजी थी। एक अन्य पहलू जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह यह है कि यद्यपि स्वतंत्र साक्षी उमा शंकर सिंह दिनांक 3.5.1998 को अभियोजन पक्ष के गवाह के रूप में उपस्थित थे, लेकिन उनका परीक्षण इस आधार पर नहीं किया गया कि जांच अधिकारी को उनके कथित पूर्व आचरण के कारण उनकी विश्वसनीयता पर संदेह था। 'महत्वपूर्ण स्वतंत्र साक्षी' का परीक्षण न किया जाना भी अभियोजन पक्ष के मामले के लिए घातक

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

है और ऐसे साक्षी को पूर्णतः अस्वीकार आधार पर छोड़ दिया गया है। इसी प्रकार, अभिलेख पर ऐसा कोई दस्तावेज नहीं है जिससे यह दर्शित होता हो कि इस तथ्य को साबित करने के लिए कि घटना के दिन याचिकाकर्ता नशे की हालत में था, याचिकाकर्ता का चिकित्सकीय जांच किया गया था । **हरद्वारीलाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 1999 (8) एससीसी 582** में प्रकशित मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है-

> 3. "हमारे सामने एकमात्र आधार यह है कि शिकायतकर्ता श्री वीरेंद्र सिंह और गवाह जगदीश राम से पूछताछ न करके प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन नहीं किया गया। अधिकरण और उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता की इस शिकायत को खारिज कर दिया है कि इन दोनों व्यक्तियों का परीक्षण नहीं करने से उनके मामले पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। इन दोनों साक्षियों का परीक्षण करने पर ही पता चल पाता कि वीरेंद्र सिंह द्वारा की गई शिकायत सही थी या नहीं और इसकी सत्यता के बारे में बताने वाले वे सबसे उत्तम व्यक्ति थे। इसी तरह, जगदीश राम,जो चिकित्सीय परीक्षण के लिए अपीलकर्ता के साथ अस्पताल गए थे, अपीलकर्ता की स्थिति को साबित करने के लिए एक महत्वपूर्ण साक्षी थे। हमें नहीं लगता कि अधिकरण और उच्च न्यायालय का यह सोचना कि इन दोनों व्यक्तियों का परीक्षण न करना महत्वपूर्ण नहीं हो सकता, उचित था। इन परिस्थितियों में, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय और अधिकरण ने अपीलकर्ता के इस तर्क को महत्व न देकर त्रुटि कारित किया है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इसके अलावा, **<u>भारत संघ बनाम प्रकाश कुमार टंडन 2009 (2) एससीसी 541</u>** में प्रकाशित मामले में,माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> "15. प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिए आवश्यक है कि अपचारी अधिकारी द्वारा साक्षी को बुलाने के लिए किए गए आवेदन पर जाँच अधिकारी द्वारा विचार किया जाना चाहिए। जाँच अधिकारी उक्त आवेदन पर आदेश पारित करने के लिये बाध्य था। वह इस पर विचार करने से इनकार नहीं कर सकता था। रेलवे प्रशासन का यह तर्क नहीं दे सकते कि यह विचार करना उनका काम है कि किसी साक्षी का परीक्षण किया जाना चाहिए या नहीं। जाँच अधिकारी को इस पर निर्णय लेना था। अनुशासनात्मक कार्यवाही निष्पक्ष रूप से की जानी चाहिए। एक जाँच अधिकारी अर्ध-न्यायिक प्राधिकारी होता है। इसलिए, उसे अपने कार्यों को निष्पक्ष और युक्तियुक्त रूप से करना चाहिए, जो अन्यथा भी प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के लिये आवश्यक है।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

9. दस्तावेज़ से यह भी दर्शित होता हैं कि विभाग द्वारा केवल उन्हीं व्यक्तियों का परीक्षण किया गया है जो विभाग के नियंत्रण और प्रभाव में थे और उन सभी ने याचिकाकर्ता के विरुद्ध यंत्रवत् तरीके से गवाही दिया है। विभाग यह साबित करने में पूरी तरह विफल रहा है कि याचिकाकर्ता पहले भी लगभग इसी तरह की घटना में शामिल था। केवल शिकायतकर्ता के बयान के आधार पर यह आरोप सिद्ध पाया गया है जबकि यदि तथ्यात्मक स्थिति ऐसी थी, तो विभाग को जाँच के दौरान ही इस सम्बन्ध में साक्ष्य प्रस्तुत करनी चाहिए थी।

10. इस न्यायालय के समक्ष अन्य विचारणीय बिंदु यह है कि क्या जाँच अधिकारी प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के रूप में भी कार्य कर सकता है, क्या उसे साक्षियों का परीक्षण करने और उनसे सूचक प्रश्न पूछने की अनुमति दी जा सकती है। वर्तमान मामले के तथ्यों से यह सुस्पष्ट है कि जाँच अधिकारी ने ही प्रस्तुतकर्ता अधिकारी के रूप में भी कार्य किया है। यह भी स्पष्ट है कि कुछ साक्षियों से जाँच अधिकारी द्वारा सूचक प्रश्न भी पूछा गया था। हाल ही में, **उत्तर प्रदेश राज्य बनाम सरोज कुमार सिन्हा 2010 (2) एस.सी.सी 772** में प्रकाशित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न प्रकार से अभिनिर्धारित किया है

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

> 28. "अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण के रूप में कार्यरत एक जांच अधिकारी एक स्वतंत्र निर्णायक की स्थिति में होता है। उसे विभाग/अनुशासनात्मक प्राधिकारी /सरकार का प्रतिनिधि नहीं माना जाता है। उसका कार्य विभाग द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य का मूल्यांकन करना है, यहां तक कि अपचारी अधिकारी की अनुपस्थिति में भी, यह देखना कि क्या अखंडित साक्ष्य आरोपों को साबित करने के लिए पर्याप्त हैं। वर्तमान मामले में उपर्युक्त प्रक्रिया का पालन नहीं किया गया है। चूंकि किसी मौखिक साक्ष्य का मूल्यांकन नहीं किया गया है, इसलिए दस्तावेज साबित नहीं हुए हैं, और यह निष्कर्ष निकालने के लिए कि उत्तरदातागण के विरुद्ध आरोप साबित हो गए हैं, उन पर विचार नहीं किया जा सकता था।

29. उपरोक्त के अलावा, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 311(2) के तहत विभागीय जांच प्राकृतिक न्याय के नियमों के अनुसार किया जाना था। प्राकृतिक न्याय के नियमों की एक बुनियादी आवश्यकता यह है कि किसी कर्मचारी को किसी भी कार्यवाही में, जिसके परिणामस्वरुप कर्मचारी पर दंड अधिरोपित किया जा सकता है, सुनवाई का उचित अवसर दिया जाना चाहिये।

30. जब किसी शासकीय कर्मचारी के विरुद्ध विभागीय जाँच की जाती है, तो उसे एक आकस्मिक कार्यवाही नहीं माना जा सकता। जाँच की कार्यवाही संकीर्ण मस्तिष्क से नहीं की जा सकती। जाँच अधिकारी को पूर्णतः निष्पक्ष होना चाहिए। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतो का पालन न केवल यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि न्याय हो, बल्कि यह भी सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि किया गया न्याय स्पष्ट रूप से दिखाई दे। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतो का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी शासकीय कर्मचारी के साथ ऐसी कार्यवाहियों में जिनके परिणामस्वरूप उस पर दंड, जिसमे सेवा से बर्खास्तगी/सेवा से पदच्युत किया जाना शामिल है, लगाया जा सकता है, निष्पक्ष रूप से किया जाए।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इसके अलावा, **मोनी शंकर बनाम भारत संघ 2008 (3) एस.सी.सी 484** में प्रकाशित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न रूप से अभिनिर्धारित किया है:-

"19. डॉ. पाडिया ने हमें श्री एस.बी.सिंह द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से अवगत कराया है। उल्लेखनीय है कि मुख्य परीक्षा स्वयं जांच अधिकारी द्वारा किया गया था । चूंकि कार्यवाही दीर्घ शास्ति

अधिरोपित करने के लिए था, इसलिए प्रस्तुतकर्ता अधिकारी, जिसे विभाग द्वारा नियुक्त किया गया था, द्वारा साक्षियों का परीक्षण क्यों नहीं किया गया, यह समझ से परे है। यहाँ तक कि उस रीति के सम्बन्ध में जिसमे मुख्य परीक्षण किया गया न्यूनतम सावधानी नहीं रखा गया है । उनसे पूछे गए प्रश्न सूचक प्रश्न थे। इस बात पर ध्यान देना दिलचस्प है कि इस प्रश्न के उत्तर में कि क्या क्या उन्होंने अपीलकर्ता से 5 रुपये वापस मांगे हैं, उन्होंने न केवल नकारात्मक उत्तर दिया, बल्कि उनके अनुसार, यह कथन उन्होंने सतर्कता निरीक्षक के निर्देशानुसार दिया था। यद्यपि उन्होंने प्रदर्श पी-1 और पी-2 प्रमाणित किया है जो अंग्रेजी भाषा में लिखा हुआ था, लेकिन यह भी कहा कि उसे नहीं पता कि उसमें क्या लिखा था। हैरानी की बात यह है कि जाँच अधिकारी ने उनका पुनः परीक्षण प्रारंभ कर दिया यहाँ तक कि पुनः परीक्षण में भी उन्होंने स्वीकार किया कि वह अंग्रेजी लिख -पढ़ नहीं सकता ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

20. जाँच अधिकारी ने अपीलकर्ता से निम्नलिखित प्रश्न पूछे थे:

"सभी अभियोजन साक्षियों को सुनने के बाद, कृपया बताएँ कि क्या आप दोषी हैं? कृपया बताएँ कि क्या आपको इस स्तर पर अपने बचाव में किसी अतिरिक्त दस्तावेज़/साक्षीकी आवश्यकता है? क्या आप अपना मौखिक बचाव या लिखित बचाव संक्षिप्त में प्रस्तुत करना चाहते हैं? क्या आप जाँच कार्यवाही से संतुष्ट हैं और क्या मैं जाँच समाप्त कर सकता हूँ?"

21. ऐसा प्रश्न नियम 9(21) का अनुपालन में नहीं किया गया है है। अपीलकर्ता के विरुद्ध क्या परिस्थितियाँ दर्शित हुई थीं, इसका खुलासा नहीं किया गया था।"

इस प्रकार, उपरोक्त आधार पर भी यह पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि विभागीय जाँच, जो प्राकृतिक न्याय के प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए किया गया है, अत्यधिक विकृत (दोषपूर्ण) है।

11. अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों से यह भी स्पष्ट है कि विभाग द्वारा सभी साक्षियों का साक्ष्य अभिलिखित करने के बाद, याचिकाकर्ता से यह भी नहीं पूछा गया कि क्या वह कोई साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है या उसके विरुद्ध प्रस्तुत साक्ष्य के बारे में कोई स्पष्टीकरण देना चाहता है। **उत्तरांचल राज्य बनाम खड़क सिंह 2008 (8) एस.सी.सी 236** में प्रकाशित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> "15 (iii)- किसी जाँच में, नियोक्ता/विभाग को आरोपित /अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध सर्वप्रथम साक्ष्य प्रस्तुत करने का कदम उठाना चाहिए और उसे नियोक्ता के गवाहों से प्रतिपरीक्षण करने का अवसर देना चाहिए। उसके बाद ही, कर्मचारी/अपचारी से पूछा जाना चाहिए कि क्या वह कोई साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है तथा उसे उसके विरुद्ध प्रस्तुत साक्ष्य के बारे में स्पष्टीकरण देने के लिए कहा जाना चाहिए।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इससे यह भी पता चलता है कि जांच की कार्यवाही याचिकाकर्ता को उचित अवसर प्रदान किये बिना, जैसा की विधि में अपेक्षित है, जल्दबाजी में किया गया था।

12. याचिकाकर्ता द्वारा उठाया गया अंतिम बिंदु कि अपीलीय प्राधिकारियों अर्थात पुलिस महानिरीक्षक और पुलिस उप महानिरीक्षक ने दिनांक 12.10.1993 और 3.2.1994 का आदेश (क्रमशः अनुलग्नक ए-13 और ए-14) पारित करते समय

यांत्रिक तरीके से काम किया है और इस हेतु उन्होंने कोई कारण नहीं बताया है,भी न्यायोचित प्रतीत होता है क्योंकि अपीलीय प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेशों से यह स्पष्ट है कि अनुशासिक प्राधिकारियों द्वारा पारित आदेश अत्यधिक यांत्रिक तरीके से बिना कोई कारण बताये पारित किया गया था। **चेयरमैन ,डिसिप्लिनरी अथॉरिटी, आर. एल. बी. के. जी. बी बनाम जे. एस वार्ष्णेय 2009 ए आई आर एस सी डब्लू 3321** में प्रकाशित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि -

> 8. हमारी राय में, एक पुष्टिकरण आदेश में पलटने वाला आदेश (ऐसा आदेश जिसमे पूर्व में दिये गये आदेश को उलट दिया गया है) के समान विस्तृत कारणों को शामिल करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि पुष्टिकरण आदेश में कोई कारण नहीं दिया जाना चाहिए। वास्तव में, प्रभु दयाल ग्रोवर (पूर्वोक्त) के उपर्युक्त निर्णय में ही कहा गया है कि अपीलीय आदेश पारित करने में विवेक का प्रयोग किया जाना चाहिए। विवेक का प्रयोग किया गया था या नहीं, यह केवल कुछ कारणों से ही पता चल सकता है, जिन्हें अपीलीय प्राधिकारी के आदेश में संक्षेप में बताया जाना चाहिए। इसलिए, हम इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते कि एक पुष्टिकरण आदेश में कोई कारण दिए जाने की आवश्यकता नहीं है। आदेश में कम से कम कुछ कारणों का संक्षिप्त रूप में उल्लेख होना चाहिए, ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या अपीलीय प्राधिकारी ने अनुशासिक प्राधिकारी के आदेश की पुष्टि करने में विवेक का प्रयोग किया था। हम जो दृष्टिकोण अपना रहे हैं, वह इस न्यायालय द्वारा *डिविजनल फॉरेस्ट ऑफिसर बनाम मधुसूदन राव, जे टी (2008 (2) एससी 253 (कंडिका 19 देखें) और मध्य प्रदेश*

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम भारत संघ, एआईआर 1966 एससी 671, सीमेंस इंजीनियरिंग एंड मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड बनाम भारत संघ, एआईआर 1976 एससी 1785 (कंडिका 6 देखें), आदि में भी अपनाया गया था।

9. वर्तमान मामले में, चूंकि अपीलीय प्राधिकारी के आदेश में कोई कारण नहीं दिया गया है, इसलिए यह आदेश पारित करते समय विवेक का प्रयोग किया गया है, यह दर्शित नहीं होता है।

14. इसलिए, हम उच्च न्यायालय से सहमत हैं कि अपीलीय प्राधिकारी के आदेश में कारण शामिल होना चाहिए था,लेकिन हम यह नहीं समझ सकते कि क्यों उच्च न्यायालय ने अपीलीय आदेश को अपास्त करने के साथ-साथ अनुशासिक प्राधिकारी के आदेश को भी अपास्त कर दिया।"

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

<u>जी वल्लीकुमारी बनाम आंध्र एजुकेशन सोसाइटी 2010 (2) एस.सी.सी 497</u> में प्रकाशित मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि -

19. "अपने आदेश में, प्रबंध समिति के अध्यक्ष ने जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्षों के आलोक में अपीलकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों और उसके द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदन का उल्लेख तो किया, लेकिन उसके अभ्यावेदन की विषय-वस्तु पर ध्यान दिए बिना और नियम 120(1)(घ)(iv) के संदर्भ में विवेक का प्रयोग दर्शित किये बिना ही, उसे सेवा से हटाने का निर्देश दे दिया। इसलिए, इस निष्कर्ष से नहीं बचा जा सकता है कि कि अध्यक्ष द्वारा दंड का आदेश सुसंगत सांविधिक नियम और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन किए बिना पारित किया गया था। किसी व्यक्ति पर

प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला आदेश पारित करने और उस आदेश से प्रभावित व्यक्ति को उसकी सूचना देने का कार्य और इस सम्बन्ध में कारण अभिलिखित करना प्रत्येक प्राधिकृत अर्ध-न्यायिक या प्रशासनिक प्राधिकारी के लिये आवश्यक है और यह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतो के मान्यता प्राप्त पहलुओं में से एक है और इसका उल्लंघन संबंधित प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को अमान्य कर सकता है।

20. अधिकरण के आदेश को ध्यानपूर्वक पढ़ने से पता चलता है कि यद्यपि अधिकरण ने अपीलकर्ता के विरुद्ध जाँच में कोई प्रक्रियागत त्रुटि नहीं पाई, प्रबंध समिति के अध्यक्ष द्वारा पारित आदेश को केवल अधिनियम की धारा 8(2) सहपठित नियम 120(2) के उल्लंघन के आधार पर अकृत (रद्द) कर दिया गया था क्योंकि अपीलकर्ता को सेवा से हटाने से पहले निदेशक की अनुमति नहीं ली गई थी। उच्च न्यायालय ने अधिकरण के आदेश को अपास्त कर दिया और प्रबंध समिति के अध्यक्ष द्वारा पारित आदेश को अप्रत्यक्ष रूप से बहाल कर दिया क्योंकि न्यायालय का मानना था कि धारा 8(2) अल्पसंख्यक संस्थानों पर लागू नहीं होती। न तो अधिकरण और न ही उच्च न्यायालय की युगल पीठ ने जांच अधिकारी द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष के सम्बन्ध में अपीलकर्ता की चुनौती पर विचार किया और निर्णय लिया और उनका यह तर्क कि सेवा से निष्कासन के रूप में उस पर अधिरोपित कठोर शास्ति न्यायोचित नहीं है क्योंकि उसे किसी भी गंभीर कदाचार का दोषी नहीं पाया गया था।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

13. मामले की उपरोक्त तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को देखते हुए, यदि मौजूदा विधिक स्थिति के आलोक, में देखा जाए तो इस न्यायालय की सुविचारित मत के अनुसार, पुलिस अधीक्षक द्वारा पारित आदेश दिनांक 30.6.1993 (अनुलग्नक ए-11), पुलिस उप महानिरीक्षक द्वारा पारित आदेश दिनांक 12.10.1993 (अनुलग्नक ए-13) और पुलिस महानिरीक्षक द्वारा पारित आदेश दिनांक 3.2.1994 (अनुलग्नक ए-14) अपास्त किए जाने योग्य हैं। तदनुसार, याचिका स्वीकार की जाती है। उपरोक्त तीनों आदेश अभिखंडित (रद्द) किए जाते हैं। जिस स्तर पर पुलिस अधीक्षक ने दिनांक 24.02.1993 को याचिकाकर्ता को नोटिस जारी किया था और उसका जवाब मांगा था, उस स्तर पर प्रकरण पुलिस अधीक्षक को प्रतिप्रेषित किया जाता है। पुलिस अधीक्षक याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत जवाब पर विधि की आवश्यकता के अनुसार विचार करेंगे और यदि वे चाहें तो मामले के सम्बन्ध में आगे कार्यवाही कर सकते हैं। याचिकाकर्ता पिछले वेतन के बिना पद पर बहाल किये जाने का हक़दार होगा। बहाली और अन्य सेवा लाभ केवल विभागीय कार्यवाही पूरी करने के उद्देश्य से किया जायेगा। याचिकाकर्ता की पात्रता, यदि कोई हो, का निर्णय प्राधिकारियों द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही, यदि ऐसा कार्यवाही शुरू किया गया हो, तो उसके परिणाम के आधार पर किया जाएगा। हालाँकि, मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, यह न्यायालय उत्तरदातागण पर 20,000/- रुपये का जुर्माना लगाना उचित समझता है जो याचिकाकर्ता को देय होगा ।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

सही /-

प्रीतिंकर दिवाकर

न्यायाधीश

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयी एवं व्यवाहरिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

Translated By ---------- Uttara Shrivastav